चाल-चेहरा-चरित्र पर कुछ चिन्तन-चर्वण

• फटक चन्द गिरधारी

संजय लीला भंसाली की फिल्म 'देवदास' के चुन्नी बाबू की तो याद होगी ही आपको। हमेशा अनुप्रास अलंकार में बोला करते थे। वास्तव में कहीं मिल जाते तो भाजपा वाले हाथ पकड़कर भर्ती कर लेते। अगले चुनाव में यदि टिकट नहीं मिलता तो कम से कम स्टार प्रचारक तो ज़रूर होते।

अनुप्रास अलंकार से संघी राजनीति का अन्तर्सम्बन्ध समाज विज्ञान, मनोविज्ञान और साहित्य—तीनों ही क्षेत्रों में गहन-गम्भीर शोध का एक मौलिक विषय हो सकता है। हमारे शहर में कुछ वर्षों पहले संघ का एक चिन्तन-शिविर लगा था, जिसमें भाजपा के चाल-चेहरा-चरित्र पर काफी चिन्तन-चर्वण हुआ था। तब से चलन कुछ ऐसा चला कि संघ परिवार के सभी चिल्लर चाल-चेहरा-चरित्र का चरखा कातते रहते थे। मगर चिन्तन की चक्की क्या चोकर पीसती जब धानी में डालने वाले अनाज में ही घुन लग गया हो! है न "च" से चुन्नी बाबू!

(आगे अपनी बात लिखते हुए हम भी देखेंगे कि हम संघियों की तरह अनुप्रास अलंकार का प्रयोग करते हुए अपनी बात कह पाते हैं या नहीं! इसके लिए चाल-चेहरा-चरित्र वाले 'च' अक्षर को ही चुनना ठीक रहेगा)

गुज़रा साल संघ परिवार पर कठिन गुज़रा। आडवाणी अपनी जन्मभूमि की यात्रा के दौरान मज़ार पर क्या गये, उनकी चाल ही कुछ बदली-बदली सी लगी संघ को। देश ने भाजपा का एक चेहरा कमीशनखोर सांसदों के रूप में चैनल वालों के स्टिंग ऑपरेशन की सीडी में देखा। और संजय जोशी जैसे चतुर-सुजान, विश्वस्त संघी का जो चरित्र देश भर में एक सीडी से उजागर किया, उसे तमाम खण्डनों के बावजूद देश की जनता ने संघी नैतिकता के एक प्रतिनिधि उदाहरण के रूप में देखा और सड़क के शोहदों ने चटखारे लिए। अन्दर के विवादों ने भी सड़क पर आकर शोभा में चार चाँद लगा दिये। हालात ऐसे रहे कि पार्टी के जो चुगद, चुक्कड़ और चिल्लर चूँ तक नहीं करते थे, वे अब चिंग्घाड़ रहे थे। नीति-निर्मातागण चंचल-चित्त हो उठे। चिन्तन शिविरों में चिन्ता का घटाटोप छा गया और जैसा कि दास कवि कबीर पहले ही कह गये थे, चतुराई घटने लगी। अब हालत यह है कि पुरानी चालें चुक गई सी लगती हैं और भाजपा का राजनीतिक रथ लड़िया की तरह चरमराते हुए एक चौराहे पर जा पहुँचा है।

(बस! अनुप्रास अलंकार का प्रयोग तो इस टिप्पणी को चूँ-चूँ का मुरब्बा बना देगा। क्या चूतियापा है कि हम भी चपड़कनातियों और चपण्डूकों जैसी हरकत किये जा रहे थे!)

दरअसल समस्या यह है कि हिन्दुत्व की फासीवादी राजनीति को साम्राज्यवादी और देशी पूँजीवादी शासक ज़ंजीर से बँधे शिकारी कुत्ते की तरह इस्तेमाल करना चाहते हैं, उधर कुत्ता दैवी अन्तःप्रेरणा के वशीभूत ज़ंजीर छुड़ाकर स्वतंत्र होना चाहता है। वह हिटलर राज के सपने देखता है, जो आज न तो सम्भव है, न ही पूँजीवाद की ज़रूरत। अन्तर्द्वन्द्व का एक मूल कारण यह भी है कि संघ की राह पुराने धर्मांध किस्म के फासीवाद की है, जबकि भाजपा की नयी पीढ़ी को थोड़े मॉडर्न किस्म का फासीवाद चाहिए। दोनों में समन्वय की कोशिशें जारी हैं। राम मन्दिर का पत्ता फिर से खेलने के विकल्प को भी तोला जा रहा है और तमाम पतित समाजवादियों और क्षेत्रीय बुर्जुआ दलों (जो एक दिन कांग्रेस-विरोध की राजनीति करते हैं तो अगले दिन 'सेकुलर-सेकुलर' खेलने लगते हैं) के साथ मोर्चे की राजनीति का अभ्यास भी जारी है। भाजपा की समस्या यह है कि पूँजीपतियों को उदारीकरण-निजीकरण की डगर पर रथ हाँकने वाले सबसे कुशल सारथी फिलहाल मनमोहन-मोण्टेक-चिदम्बरम लग रहे हैं और चुनावी वामपंथियों की सेफ़्टी वाल्व भूमिका भी खूब भा रही है। दूसरी समस्या यह भी है कि समय आने पर जनवाद का रामनामी दुपट्टा उतार फेंकने के लिए जब हर पूँजीवादी दल तैयार है तो संघी राजनीति का बाज़ार भाव मालिकों की नज़र में यूँ भी कम हो जाता है। फिर भी संघ परिवार को पुनरुत्थान की आस है। उसे आस है कूपमण्डूकता के पुराने सांस्कृतिक दलदल से, उसे आस है विकल्पहीन, अलगावग्रस्त, पराजितमना, निराश, पीले बीमार चेहरे वाले करोड़ों मध्यवर्गीय युवाओं से और लम्पट सर्वहाराओं से, उसे आस है रुग्ण-वृद्ध पूँजीवाद की उस ज़मीन से जो फासिस्ट तत्वों को स्वतःस्फूर्त गति से पैदा करती रहती है।

जैसा कि प्रेमचन्द ने काफ़ी पहले ही कह दिया था, साम्प्रदायिकता प्रायः संस्कृति का मुखौटा पहनकर आती है, लेकिन भारतीय संस्कृति के बारे में भाजपाइयों की समझ लालबुझक्कड़ों जैसी ही होती है। सच पूछें तो रामकथा से भी वे वाल्मीकि या तुलसी के माध्यम से नहीं बल्कि पण्डित राधेश्याम कथावाचक के जरिये परिचित होते हैं। नाटक के नाम पर वे बस रामलीला से प्यार करते हैं और रामलीला के ही भाँति-भाँति के कुत्सित रूपों के तौर पर बम्बइया सिनेमा को, और उसके अभिनेताओं को, बहुत पसन्द करते हैं। आश्चर्य नहीं कि भाजपा ने अपनी पच्चीसवीं सालगिरह का आयोजन मुम्बई में किया। वहाँ अटल बिहारी वाजपेयी ने आडवाणी को राम, प्रमोद महाजन को

(पेज 44 पर जारी)

बाल-चेहरा-चरित्र पर कुछ चिन्तन-चर्वण

(पेज 38 से जारी)

लक्ष्मण और स्वयं को परशुराम बताकर एक नयी रामलीला की पटकथा लिख डाली। अब भाजपाइयों की साहित्यिक समझ ही ऐसी होती है कि हर उपमा और रूपक को वे चौतरफा खींचकर पूरे जीवन पर फैला देना चाहते हैं। सो वैंकैया ने खुद को हनुमान बताया, कुछ भाई लोगों ने राजनाथ सिंह को (राम का खड़ांऊ लेकर शासन करने वाला) भरत बताया और फिर दशरथ, कैकेयी, मंथरा, विभीषण, आदि-आदि की पहचान की जाने लगी। उधर मुम्बई में ही बाल ठाकरे भीष्म पितामह की तरह अपने परिवार में महाभारत की नयी पटकथा तैयार होते देख रहे थे। इन सबसे यह सिद्ध हो गया कि हिन्दुत्व की राजनीति करने वाले न केवल मिथक को इतिहास बनाने की कोशिश करते हैं, बल्कि वर्तमान को भी मिथकों का भोण्डा प्रहसन बना डालते हैं। यह भी कहा जा सकता है कि भाजपाइयों ने मिथकों की जो घिसाई की, अब मिथक उलटकर उनसे उसी का बदला ले रहे हैं और खूब फंचीटकर धो रहे हैं।

अटल बिहारी वाजपेयी का सबसे बड़ा साहित्यिक अवदान यह है कि अपनी कविता को वह मिथकों के युग से काफी आगे गिरधर कविराय और बीसवीं शताब्दी के प्रारम्भिक वर्षों की तुकबन्दी तक खींच लाए। अब इस समय के सबसे बड़े सवालों में से एक सवाल! निर्मल वर्मा को अपना जानकर एक संघी भाई जी ने उनकी एक कहानी पढ़ी। उन्होंने पढ़कर क्या समझा और क्या सोचा—है कोई माई का लाल जो बता सके?

भारतीय समाज और जनवाद पर कुछ विचार

(पेज 8 से जारी)

संघर्ष और परिवर्तन का काम न चले तो ऐसी क्रान्ति हो ही नहीं सकती। महज आर्थिक-राजनीतिक संघर्ष से तो वैसे भी कहीं कुछ नहीं होता, लेकिन भारत के मामले में तो सांस्कृतिक क्रान्तियों को अंजाम देने का काम बड़े पैमाने पर करना होगा। क्रान्ति केवल नया आर्थिक राज बनाना नहीं बल्कि एक नया मानस गढ़ने का काम होता है। नए मूल्य स्थापित तो क्रान्ति के बाद ही होते हैं लेकिन पहले से चलने वाले सांस्कृतिक संघर्ष ही ऐसी क्रान्तियों की पृष्ठभूमि तैयार करते हैं। सिर्फ व्यक्तिगत विद्रोहों से काम नहीं चलेगा, बल्कि इन रूढ़ियों को तोड़ने और जनवादी मूल्यों को जनमानस में स्थापित करने के लिए बहादुर, संवेदनशील, ज़हीन किस्म के नौजवानों को एक मंच पर आने की ज़रूरत है।

हमें यह समझना होगा कि समाज का विकास कभी नहीं रुकता; लेकिन अगर यह क्रान्तियों के ज़रिये नहीं होता तो नया समाज एक विकृत समाज ही होता है। भारत में जनवाद को पूर्णतः स्थापित करना इतिहास का बैकलॉग है जिसे भारत के युवाओं को एक सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक जनक्रान्ति के ज़रिये निपटाना है।

नया वर्ष
सपनों की उड़ानों के नाम
संघर्ष के संकल्पों के नाम!

आह्वान यहां से प्राप्त करें

उत्तर प्रदेश ■ जनचेतना, जाफरा बाजार, **गोरखपुर** ■ जनचेतना, 989, पुराना कटरा, यूनीवर्सिटी रॉड मनमोहन पार्क, **इलाहाबाद** ■ विजय इन्फार्मेशन सेण्टर, कचहरी बस स्टेशन, **गोरखपुर** ■ जनचेतना स्टाल, कॉफी हाउस के पास, हजरतगंज, **लखनऊ** (शाम 5 से 8.30 तक) ■ प्रोग्रेसिव बुक सेण्टर, विश्वनाथ मन्दिर गेट, बी.एच.यू. परिसर, **वाराणसी** ■ जनचेतना ठेला, चौड़ा मोड़, **नोएडा** (शाम 5 से 8) ■ शहीद पुस्तकालय, द्वारा डा. दूधनाथ, जनगण होम्यो सेवासदन, मर्यादपुर, **मऊ** ■ सत्यम वर्मा, 29, यू.एन.आई. अपार्टमेण्ट, सेक्टर-11, जी.एच.-2, वसुंधरा, गाजियाबाद

उत्तरांचल ■ जनचेतना, भदईपुरा, प्राइमरी स्कूल के पास, किच्छा रोड, रुद्रपुर, **ऊधमसिंहनगर**

दिल्ली ■ अभिनव सिन्हा, बी-100, मुकुन्द विहार, करावल नगर, दिल्ली ■ गीता बुक सेंटर, **जे.एन.यू.** ■ बुक कार्नर, श्रीराम सेंटर, **मंडी हाउस**

बिहार ■ पीपुल्स बुक हाउस, पटना कालेज के सामने, **पटना** ■ रामनारायण राय, द्वारा राघव पटेल कपड़े की दुकान, साहेबगंज, पोस्ट करनौल, जिला-**मुजफ्फरपुर**

बंगाल ■ बुक मार्क, 6, बंकिम चटर्जी स्ट्रीट, **कलकत्ता** ■ जनार्दन थापा, लुकसान बाजार, पो. करेन, जि. **जलपाईगुड़ी** ■ राकेश गोरखा, सरस्वती पुस्तक मन्दिर, प्रधाननगर, **सिलीगुड़ी**

मध्य प्रदेश ■ चिंचोलकर बुक हाउस, बस स्टैण्ड, जगदलपुर, **बस्तर**

महाराष्ट्र ■ पीपुल्स बुक हाउस, 15, कावसजी पटेल स्ट्रीट, फोर्ट, **मुम्बई**

पंजाब ■ सुखविन्दर, 154, ओम बेकरी के सामने, शहीद करनैल सिंह नगर, फेज़-3, पखोवाल रोड, लुधियाना